ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड।

बनाम

दुगल कुमार

(सिविल अपील सं. 245 ऑफ़ 2004)

28 जुलाई, 2008

(सी.के.ठक्कर एवं लोकेश्वरसिंह पंता, न्यायमूर्ति)

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226 और 32-कोयला कंपनी ने उसके द्वारा अधिग्रहित या खरीदी गई भूमि के बदले व्यक्तियों को रोजगार या कोयले की पेशकश की-कंपनी द्वारा खरीदी गई भूमि के विरूद्ध याची को 1008 मिट्रिक टन कोयले का अनुदान- कंपनी को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा जारी करने के निर्देश हेतु एक दशक बाद रिट याचिका दायर की गई-उच्च न्यायालय द्वारा आदेश दिनांक 06.09.1999 द्वारा स्वीकार-तत्पश्चात्, अधिवक्ता द्वारा मामले का उल्लेख मात्र करने पर उच्च न्यायालय ने कोयले की शेष मात्रा को 6008 मिट्रिक टन बढ़ा दिया-उसके विरूद्ध अपील खारिज-विशेष अनुमति याचिका वापस लिये जाने के कारण खारिज की गई-पुर्नविलोकन याचिका भी उच्च न्यायालय द्वारा खारिज- अपील पर अभिनिर्धारित किया गयाः- याचिकाकर्ता प्रारंभ में उसे दिये गये 1008 मिट्रिक टन कोयले का हकदार है, जो आदेश दिनांक

06.09.1999 द्वारा उन्हें 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा भी दी गई थी-कंपनी के अधिवक्ता के कथन के आधार पर आदेश पारित किया गया था कि सामान्य आदेश पारित किया जा सकता है- अतः रिट याचिका दायर करने में हुई देरी एवं उच्च न्यायालय की प्रादेशिक क्षेत्राधिकारिता के संबंध में आपत्ति बरकरार नहीं रखी जा सकती है-हालांकि, उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 06.09.1999 के आदेश में संशोधन/स्पष्टीकरण के आवेदन के बिना आदेश दिनांक 13.09.1999 का आदेश पारित करना उचित नहीं था-अतः आदेश के उस हिस्से को अपास्त किया जाता है-

अपीलार्थी-कंपनी ने एक योजना तैयार की जिसके द्वारा उसने ऐसे व्यक्ति, जिसकी एक एकड़ भूमि कंपनी द्वारा अधिग्रहित, खरीदी या उपयोग की गई, को रोजगार प्रस्तावित किया। तत्पश्चात् नीति में बदलाव किया गया और परिवार के सदस्य को रोजगार के स्थान पर 800 मिट्रिक टन (एम.टी.) कोयला की पेशकश की गई-1996 में, नीति को फिर से संशोधित किया गया और पात्रता को बढ़ाकर 1600 एम.टी. कर दिया गया। अपीलार्थी कंपनी ने प्रत्यर्थी की 1.26 एकड़ जमीन खरीदी और धनबाद में एक पंजीकृत बिक्री विलेख निष्पादित किया। नीति के अनुसार, कंपनी ने प्रतिवादी को 1008 एम.टी.कोयले की पेशकश की- प्रत्यर्थी ने स्वीकार किया और कोयला दे दिया गया। दस साल की अवधि के बाद, प्रत्यर्थी ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष कंपनी को 1008 मिट्रिक टन कोयले की

अतिरिक्त मात्रा प्रत्यर्थी के पक्ष में मुक्त करने के निर्देश चाहते हुए रिट याचिका दायर की। रिट याचिका प्रथम सुनवाई हेतु 06.09.1999 को रखी गई एवं कंपनी के अधिवक्ता के इस आशय के कथन, कि मामले में ''सामान्य आदेश'' पारित किया जाए, के आधार पर याचिका निस्तारित की गई। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने कंपनी को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा आवंटित करने का निर्देश दिया। उसके बाद 13.09.1999 को प्रत्यर्थी ने बिना कोई प्रार्थना पत्र दायर किये मामले का उल्लेख किया और उच्च न्यायालय ने कोयले की शेष मात्रा को 6800 मिट्रिक टन तक बढ़ा दिया। कंपनी ने उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के आदेश को चुनौती देते हुए अपील दायर की। उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने अपील खारिज कर दी। उससे पीड़ित होकर अपीलार्थी ने विशेष अनुमति याचिका दायर की जो तत्पश्चात् इसलिए वापस ले ली गई क्योंकि कंपनी उच्च न्यायालय के समक्ष पुर्नविलोकन याचिका दायर करना चाहती थी। तत्पश्चात् अपीलार्थी ने पुर्नविलोकन याचिका दायर की। उच्च न्यायालय की खण्ड़पीठ ने इसे खारिज कर दिया। अतः यह वर्तमान अपील प्रस्तुत हुई।

आंशिक रूप से अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि-

अभिनिर्धारित 1.1 कंपनी द्वारा उच्च न्यायालय कलकत्ता के प्रादेशिक

क्षेत्राधिकार के संबंध में उठाई गई तकनीकी आपत्ति के आधार पर रिट याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित आदेश अपास्त करना उचित नहीं होगा। अभिलेख से यह स्पष्ट है कि दिनांक 06 सितम्बर, 1999 को रिट याचिका प्रवेश सुनवाई के लिए आई थी और अपीलार्थी-कंपनी के वकील उपस्थित थे। न केवल यह कि उन्होंने न्यायालय के प्रादेशिक क्षेत्राधिकार के संबंध में आपत्ति नहीं उठाई, बल्कि अभिव्यक्त रूप से न्यायालय के समक्ष सामान्य आदेश पारित करने के लिए कथन किया। तदनुसार, कंपनी को 1008 मिट्रिक टन की शेष मात्रा आवंटित करने का निर्देश देते हुए एक आदेश पारित किया गया था। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि कलकत्ता का उच्च न्यायालय रिट याचिका पर विचार करने के लिए कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं रखता था। (पैरा 13) (380-सी-एफ)

1.2 यह निवेदन, कि अपील पोषणीय नहीं है, क्योंकि कंपनी ने पुर्नविलोकन याचिका दिनांक 28 जनवरी, 2002 में पारित आदेश को चुनौती दी है, न कि मुख्य आदेश दिनांक 17 फरवरी, 2000 को, जिसके द्वारा अंतर न्यायालय अपील खारिज की गई, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया कि जब पुर्नविलोकन याचिका खारिज की गई तो, खण्ड़पीठ द्वारा अंतर न्यायालय अपील में पारित आदेश पुर्नविलोकन याचिका में पारित आदेश में शामिल हो गया। लेकिन अन्यथा भी, जब पुर्नविलोकन याचिका में पारित आदेश को चुनौती दी गई, इस अपील को

खारिज करना उचित नहीं होगा। विशेष रूप से जब विशेष अनुमति याचिका में पक्षकारों को सुनने के पश्चात् अनुमति स्वीकार की गई। (पैरा 14) (380-एफ, 381-ए)

1.3 यह सुनिर्धारित है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उपयुक्त याचिका, आदेश या निर्देश जारी करने की उच्च न्यायालय की शक्ति विवेकाधीन है। याचिका न्यायालय द्वारा राहत अस्वीकार करने के आधारों में से एक यह है कि याचिकाकर्ता विलम्ब और असावधानी का दोषी है। जहां याचिकाकर्ता संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण उपचार का आव्हान करता है वहां यह आवश्यक है कि उसे न्यायालय के समक्ष जल्द से जल्द उचित संभव अवसर पर आना चाहिए। याचिका दायर करने में हुई असाधारण देरी आवेदनकर्ता के पक्ष में विवेकाधिकार का प्रयोग करने से इंकार करने का पर्याप्त आधार है। (पैरा 15) (381 बी-डी)

तिलोकचंद मोतीचंद बनाम एच.बी. मुंशी 1969 (2) एससीआर 824, रवीन्द्रनाथ बोस बनाम भारत संघ 1970 (1) एससीआर 697, एक्सप्रेस पब्लिकेशन बनाम भारत संघ 2004(11) एस.सी.सी. 526, रामचन्द्र देवधर बनाम महाराष्ट् राज्य 1974(1) एस.सी.सी. 317-पर निर्भर।

आर. बनाम एसेक्स कंट्री काउंसिल 1993 सीओडी 344, आर बनाम डेयरी, प्रोडयूस कोटा ट्रिब्यूनल 1990(2) एससी 738 लिंडसे पेट्रोलियम कंपनी बनाम प्रोस्पर आर्मस्ट्रांग 1874 (5) पी.सी. 221 संदर्भित

1.4 एकल न्यायाधीश को 1999 में रिट याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए था और कंपनी को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा याचिकाकर्ता को देने के निर्देश नहीं देने चाहिए थे। कंपनी की ओर से उपस्थित होने वाले अधिवक्ता के इस कथन, कि न्यायालय'' सामान्य आदेश'' पारित कर सकता है, को ध्यान में रखते हुए आदेश पारित किया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा प्रति शपथपत्र में यह भी कहा गया कि विभिन्न मामलों में इसी तरह के आदेश पारित किए गए थे। अतः अब यह उचित होगा कि एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का लाभ याचिकाकर्ता को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा तक बढ़ा दिया जाए। जो कंपनी के अधिवक्ता के कथन पर आधारित था। (पैरा 21) (383 डी-एफ)

1.5 6 सितंबर, 1999 को रिट याचिका के निस्तारित होने के बाद, जिसमें याचिकाकर्ता को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा आवंटित करने के निर्देश दिये गये, एकल न्यायाधीश द्वारा आदेश दिनांक 6 सितम्बर, 1999 में संशोधन/स्पष्टीकरण हेतु किसी आवेदन के बिना, मात्र मामले का उल्लेख किये जाने पर 13 सितंबर,1999 का आदेश पारित करना एवं कंपनी को डी श्रेणी की गुणवत्ता का 6800 मिट्रिक टन स्टेक कोयला की शेष मात्रा आवंटित करने के निर्देश देना उचित नहीं था। (पारस 22 और 25) (383 जी-एच 385 सी)

1.6 आदेश दिनांक 13.09.99 के प्रकाश में खण्डपीठ को एकल

न्यायाधीश द्वारा दिनांक 13 सितंबर, 1999 के आदेश में दिये निर्देशों में हस्तक्षेप करना चाहिए था और अंतर न्यायालय अपील स्वीकार होनी चाहिए थी। जब अंतर न्यायालय अपील खारिज हुई, तो अपीलार्थी ने विशेष अनुमति याचिका दायर कर इस न्यायालय की शरण ली। इसे वापस ले लिया गया मानकर खारिज कर दिया गया क्योंकि कंपनी पुर्नविलोकन याचिका में खण्डपीठ के समक्ष जाना चाहती थी। मामले के तथ्यों ओर परिस्थितियों के आधार पर खण्डपीठ को उक्त पहलू पर विचार करना चाहिए था और कानून के अनुसार उचित आदेश पारित करना चाहिए था। (पैरा 24) (384 ई-जी)

1.7 परिस्थितियों की समग्रता से, प्रतिवादी रिट याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा पंजीकृत विक्रय विलेख द्वारा स्वयं द्वारा बेची गई भूमि की कीमत(प्रतिफल) का हकदार था, जिसका भुगतान उसे पहले ही किया जा चुका था। वह 1008 मिट्रिक टन कोयले का भी हकदार था जो कंपनी के अधिवक्ता द्वारा किये गये कथन के आधार पर और एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश दिनांक 6 सितंबर,1999 के निबंधनों के अनुसार शेष मात्रा के रूप में दिया गया है। रिट याचिकाकर्ता इससे अधिक किसी चीज का हकदार नहीं होगा। यदि कोयले की उक्त मात्रा पहले ही आवंटित की जा चुकी है, तो कंपनी ने अपने दायित्व का निर्वाह कर दिया है और इससे अधिक कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन अगर उक्त मात्रा

जारी नहीं की है तो रिट याचिकाकर्ता उपरोक्त सीमा तक कोयले का हकदार होगा। (पारस 25 और 26) (384 एच, 385 ए-बी) (385 डी-ई)

प्रकरण विधि संदर्भ

1993 सीओडी 344	संदर्भित किया गया	16
1990(2) एसी 738	संदर्भित किया गया	17
1874(5) पीसी 221	संदर्भित किया गया	18
1969(2) एससीआर 824	पर भरोसा	19
1970(1) एससीआर 697	पर भरोसा	19
2004(11) एस.सी.सी.526	पर भरोसा	20
1974(1) एस.सी.सी.317	पर भरोसा	20

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं.245/2004

के अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 28.01.2002 से उच्च न्यायालय कलकत्ता के जी.ए.3319/2000 ए.पी.ओ.टी.संख्या 94/2000 में

अपीलार्थी के लिए अजीत कुमार सिन्हा और शिवलोक

प्रत्यर्थी की ओर से आर.के.गुप्ता और ए.एन.बरदियार

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

सी.के.ठक्कर, न्यायमूर्ति 1. यह अपील ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड (संक्षेप में कंपनी) द्वारा कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्ड़पीठ द्वारा 28 जनवरी 2002 को अपीलकर्ता की ओर से दायर पुर्नविलोकन याचिका को खारिज करने के आदेश के विरूद्ध की गई है।

2. मामले के तथ्य यह है कि अपीलार्थी धारा 617 कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत सरकारी कंपनी है। कंपनी द्वारा एक ऐसे व्यक्ति, जिसने कंपनी द्वारा अधिग्रहित, खरीदी या उपयोग की गई एक एकड़ भूमि खोई हो, को रोजगार देने के लिए एक योजना तैयार की गई थी। बाद में योजना में बदलाव हुआ तथा जिनकी एक एकड़ जमीन कंपनी द्वारा अधिग्रहित, खरीद या उपयोग ली गई थी एवं जो रोजगार प्राप्त करने की इच्छा नहीं रखते थे, उन्हें परिवार के सदस्य को रोजगार के बदले 800 मिट्रिक टन कोयला की पेशकश की गई। 1996 में योजना पुनः संशोधन हुई तथा पात्रता को बढ़ाकर 1600 मिट्रिक टन कर दिया गया।

3. कंपनी का प्रकरण यह है कि उसने प्रत्यर्थी से 1.26 एकड़ जमीन खरीदी और विक्रय विलेख सं.2006, दिनांक 17 फरवरी, 1989 को धनबाद में निष्पादित किया गया। उस समय प्रचलित नीति के आलोक में, प्रतिवादी को प्रति एकड़ 800 मिट्रिक टन के आधार पर 1008 मिट्रिक टन कोयले की पेशकश की गई थी क्योंकि 1.26 एकड़ भूमि की बिक्री की गई

थी। प्रत्यर्थी ने दिनांक 23 फरवरी, 1989 को उक्त निर्णय को स्वीकार किया तथा महाप्रबंधन को संबोधित करते हुए लिखित संदेश भेजा कि भूमि स्वामी रोजगार प्राप्त करने का इच्छुक नहीं है और वह शुक्रगुजार होगा अगर 1008 मिट्रिक टन स्टीम कोयला ग्रेड-डी का उसे दे दिया जाए। प्राधिकारियों ने प्रार्थना स्वीकार की ओर अपीलार्थी कंपनी ने पत्र दिनांक 22 मई, 1989 के माध्यम से 1008 मिट्रिक टन स्टीम कोयला ग्रेड-डी देने का आदेश पारित कर दिया। यह कहा गया कि उक्त संदेश में वर्णित शर्तो व निबंधनों की पालना में कोयला दिया जा रहा है। कंपनी के अनुसार सबकुछ पूर्ण हो गया ओर मामले में आगे कोई कार्यवाही की आवश्यकता नहीं रही। प्रत्यर्थी रिट-याचिकाकर्ता को पंजीकृत विक्रय विलेख द्वारा बेची गई भूमि का प्रतिफल अदा हो गया। मुआवजे के अतिरिक्त लागू नीति के अनुसार उन्होंने 1008 मिट्रिक टन कोयला प्रस्तावित किया जिसे प्रत्यर्थी ने स्वीकार किया और मात्रा जारी कर दी गई, जिसे प्रत्यर्थी ने बिना किसी विरोध, आपत्ति या संदेह के स्वीकार कर लिया और मामला वहीं खत्म हो गया।

4. लगभग एक दशक की पर्याप्त देरी के बाद, 1999 की 770 नंबर की रिट याचिका दायर की गई जिसमें कहा गया था कि रिट याचिकाकर्ता (यहां प्रत्यर्थी) 1008 मिट्रिक टन कोयले की अतिरिक्त मात्रा का हकदार है और कंपनी को उसे जारी करने के लिए उचित निर्देश देने चाहिए। दिनांक 6 सितंबर, 1999 को रिट याचिका प्रथम सुनवाई के लिए रखी गई थी

और उसी दिन, न्यायालय द्वारा अन्य बातों के साथ यह कहते हुए कि विपक्षी की ओर से कोई विरोध में कोई शपथ पत्र दायर नहीं किया गया, निस्तारित कर दी गयी और कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि ''सामान्य आदेश'' मामले में पारित कर दिया जाए। तदनुसार कंपनी को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा रिट याचिकाकर्ता को आवंटित करने के निर्देश दिये गये।

5. उक्त आदेश निम्न अनुसार है,

"श्री डी.पी. मजूमदार, अधिवक्ता, श्री जी.पात्रा, अधिवक्ता उपस्थित होकर निवेदन करते है।

श्री ए.के.मित्रा, अधिवक्ता, मोहम्मद इदरिश अधिवक्ता, उपस्थित होकर निवेदन करते है।

न्यायालय द्वाराः विरोध में कोई शपथ पत्र दायर नहीं हुआ है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते है कि मामले मैं सामान्य आदेश पारित कर दिया जाए। तद्नुसार मैं निम्नलिखित आदेश पारित करता हूंः-

प्रत्यर्थीगण को 1008 मिट्रिक टन की शेष मात्रा याचिकाकर्ता को नयनडांगा कोलियरी, मुग्मा क्षेत्र से मुक्ति आदेश दिनांक 25.05.1989 की शर्तो के अनुसार

आवंटित करने का निर्देश दिया जाता है।

रिट याचिका निस्तारित की गई।

सभी पक्षों को सामान्य उपक्रम पर इस आदेश के कार्यवृत्त की हस्ताक्षरित प्रति के अनुसार कार्य करना है।"

6. अपीलकर्ता कंपनी द्वारा यह कहा गया है कि आदेश दिनांक 6 सितम्बर, 1999 के पश्चात्, 13 सितंबर, 1999 को फिर से याचिकाकर्ता द्वारा बिना कोई आवेदन दायर किए मामले का उल्लेख किया गया और उच्च न्यायालय ने अपने पूर्ववर्ती आदेश 6 सितम्बर, 1999 को संशोधित किया तथा 1008 मिट्रिक टन को बढ़ाकर 6800 मिट्रिक टन कर दिया गया। दुबारा मामला दिनांक 15 सितंबर 1999 को उल्लेखित किया गया और आदेश को सही किया गया।

7. विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश से व्यथित होते हुए कंपनी ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेशों को चुनौती देते हुए एक अपील ए.पी. ओ. टी.नं.94/2004 करने का चयन किया। हालांकि, उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने दिनांक 17 फरवरी, 2000 को अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि जब विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 6 सितम्बर, 1999 को आदेश पारित किया गया था तब कंपनी के अधिवक्ता उपस्थित थे तथा कंपनी की ओर से कोई जवाब प्रस्तुत नहीं किया गया।

इन परिस्थितियों में कंपनी को स्वयं को ही दोष देना था। तत्पश्चात् मामला विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा ग्रहण किया गया एवं उक्त स्तर पर ही कोई जवाब प्रस्तुत नहीं हुआ। न्यायालय के अनुसार, इसलिए एकल न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था और अपील खारिज कर दी गई।

8. कंपनी ने 2000 की विशेष अनुमति याचिका सं.8238 दायर करके उच्च न्यायालय की खण्ड़पीठ द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी। जब मामला प्रवेश सुनवाई के लिए आया, तो इसे 12 मई, 2000 को वापस ले लिया गया। उक्त आदेश उल्लेखित करता है कि कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने व्यक्त किया कि कंपनी उच्च न्यायालय में पुर्नविलोकन याचिका दायर करेगी। विशेष अनुमति याचिका तदनुसार वापस लिये जाने के कारण खारिज कर दी गई। इसके पश्चात् कंपनी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष पुर्नविलोकन याचिका दायर की गई और जैसा कि उपर कहा गया है, पुर्नविलोकन याचिका भी न्यायालय द्वारा यह मत लेते हुए खारिज कर दी गई कि आदेश में पुर्नविलोकन के लिए कोई प्रत्यक्ष त्रूटि नहीं है। उक्त आदेश को वर्तमान अपील में चुनौती दी गई है।

9. प्रारंभ में जब मामला प्रवेश सुनवाई के लिए रखा गया, 12 अगस्त, 2002 को सूचना जारी हुई। यह प्रकट होता है कि विशेष अनुमति याचिका 12 फरवरी, 2003 को खारिज कर दी गई थी, किंतु उक्त आदेश

को न्यायालय ने 12 सितंबर, 2003 को वापस ले लिया था। 2003. 12 जनवरी, 2004 को अनुमति दी गई, मुद्रण से छूट दी गई तथा विशेष अनुमति याचिका की पेपरबुक पर अपील की सुनवाई के आदेश जारी किये गये। पक्षकारों को अतिरिक्त दस्तावेज दायर करने की छूट दी गई। मूल अभिलेख मंगाया गया था। उच्च न्यायालय के आदेश के विरूद्ध अंतरिम रोक भी स्वीकार किया गया। 7 मार्च, 2008 को इस न्यायालय की पीठ ने माननीय मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में ग्रीष्म अवकाश के दौरान मामले की अंतिम सुनवाई के आदेश दिये और तदनुसार 27 मई, 2008 को अंतिम निस्तारण के लिए हमारे समक्ष मामला रखा गया।

10. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना है।

11. अपीलकर्ता कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश रद्द किये जाने योग्य है। यह निवेदन किया गया कि स्वीकार रूप से विक्रय का सौदा धनबाद में सम्पन्न हुआ। दोनों पक्षकार, अपीलार्थी ओर प्रत्यर्थी भी धनबाद में रह रहे थे। अतः संपूर्ण वाद हेतुक बिहार राज्य (अब झारखण्ड क्षेत्र के भीतर) की क्षेत्रीय अधिकारिता में उत्पन्न हुआ। अतः कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने और निर्णय लेने के लिए कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं था। अकेले उसी आधार पर कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा जारी आदेश रद्द किये जाने योग्य है। यह भी निवेदन किया गया कि स्वीकार्य रूप से प्रत्यर्थी

द्वारा फरवरी, 1989 में विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था। कंपनी ने प्रतिफल की राशि को अदा कर दिया एवं उस समय लागू नीति के तहत सम्पत्ति के प्रतिफल की राशि के अतिरिक्त 1008 मिट्रिक टन कोयले की पेशकश की। रिट-याचिकाकर्ता ने पेशकश को स्वीकार किया, मुक्ति आदेश जारी किया गया था और माल उसे सौपा जा चुका था जिसे रिट याचिकाकर्ता ने बिना किसी विरोध या आपत्ति के स्वीकार किया। लगभग 10 वर्षो के पश्चात् एक रिट याचिका दायर की गई जिसपर विचार किया गया तथा उच्च न्यायालय द्वारा आदेश पारित किए गए। अपीलार्थी के अनुसार, रिट याचिकाकर्ता की ओर से न्यायालय की शरण लेने में बहुत अधिक देरी और विलम्ब हुआ है तथा इसी आधार पर ही याचिकाकर्ता के पक्ष में अनुतोष जारी करने का कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता था। इसके अतिरिक्त याचिकाकर्ता और कंपनी के मध्य कोई अधिकार, कर्तव्य संबंध नहीं था। याचिकाकर्ता का अधिकार कंपनी को बेची गई भूमि के बदले प्रतिफल प्राप्त करने तक सीमित था। उक्त राशि भी रिट याचिकाकर्ता को पहले ही भुगतान कर दी गई। मात्र नीति के आधार पर रिट याचिकाकर्ता को कोयले की पेशकश की गई थी। भले ही यह मान लिया जाए कि कंपनी द्वारा अपनायी गई नीति के तहत याचिकाकर्ता को कोयला प्राप्त करने का अधिकार था तो भी प्रत्यर्थी जिस मात्रा का हकदार था, उसे दे दी गई थी। इसके बाद कंपनी के खिलाफ शिकायत करने का कोई कारण नहीं था। रिट याचिकाकर्ता द्वारा 1999 में दायर रिट याचिका

दायर के माध्यम से अतिरिक्त मात्रा की मांग की गई वह 1996 की नीति पर आधारित थी। जिसके लिए रिट याचिकाकर्ता हकदार नहीं था। इसलिए मात्र इसी आधार पर याचिका खारिज होने योग्य थी। अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि जब रिट याचिकाकर्ता को भूमि का प्रतिफल अदा कर दिया गया, साथ ही तत्कालीन नीति के तहत कोयला दे दिया गया और जिसे बिना किसी विरोध के स्वीकार कर लिया गया, तो रिट याचिकाकर्ता उक्त निर्णय को चुनौती देने से साम्यिक विबंध के सिद्धांत के आधार पर विबंधित हो गया। अपने आचरण से रिट याचिकाकर्ता ने यह स्पष्ट कर दिया कि जिस मात्रा की उसे पेशकश कर दी गई थी उससे वह संतुष्ट है और उसे स्वीकार करने के बाद उक्त निर्णय को चुनौती नहीं दी जा सकती थी। यह भी अनुरोध किया गया कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह मत सही नहीं लिया कि रिट याचिकाकर्ता रिट याचिका में मांगे गये अनुतोष के लिए इस आधार पर हकदार था कि कंपनी द्वारा कोई प्रतिशपथ पत्र दायर नहीं किया गया। अभिलेख दर्शाता है कि रिट याचिकाकर्ता द्वारा 18 फरवरी, 1999 को रिट याचिका दायर की गई। जिसे 6 सितम्बर, 1999 को प्रथम सुनवाई के लिए रखा गया तथा उसी दिन मामला निस्तारित कर दिया गया। इसीलिए न्यायालय के लिए यह मत लेना उचित नहीं था कि चूंकि कंपनी द्वारा कोई शपथ पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया, अतः याचिकाकर्ता की प्रार्थना स्वीकार की जानी चाहिए। एक पीड़ा यह भी व्यक्त की गई कि 6 सितम्बर, 1999 के निर्णय के बाद भी बिना किसी प्रार्थना पत्र के मामले

का उल्लेख मात्र करने पर आदेश को संशोधित कर दिया गया तथा अतिरिक्त 1008 मिट्रिक टन से मात्रा बढ़ाकर 6800 मिट्रिक टन कर दी गई जो कि स्पष्टतया विधि विरूद्ध और बिना क्षेत्राधिकारिता के था। लेटर पेटेन्ट अपील में भी खण्डपीठ द्वारा कंपनी के शपथ पत्र दायर न करने के तथ्य को वजन दिया गया लेकिन जैसा कि पहले भी कहा गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रथम सुनवाई के दिन ही मामले पर विचार किया गया और निस्तारण कर दिया गया और जिसमें कंपनी की ओर से कोई चूक नहीं थी। अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया कि उच्च न्यायालय की खण्ड़पीठ द्वारा पारित आदेश के विरूद्ध विशेष अनुमति याचिका में इस न्यायालय ने अभिमत लिया कि कंपनी के अधिवक्ता पुर्नविलोकन याचिका दायर करना चाहते है एवं विशेष अनुमति याचिका इसलिए वापस लिए जाने के कारण खारिज कर दी गई थी। लेकिन उसके बाद भी खण्ड़ पीठ ने पुर्नविलोकन याचिका खारिज कर दी इस कारण कंपनी को इस न्यायालय की दोबारा शरण लेने की आवश्यकता पड़ी। इसलिए, यह निवेदन किया गया था कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को अपील को स्वीकार करते हुए रद्द किया जाए तथा यह अभिनिर्धारित किया जाए कि रिट याचिकाकर्ता कोयले की अतिरिक्त मात्रा का हकदार नहीं था और उच्च न्यायालय को कंपनी को कोयले की आपूर्ति का आदेश नहीं देना चाहिए था।

12. प्रत्यर्थी रिट याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों का समर्थन किया। यह निवेदन किया गया कि विद्वान एकल न्यायाधीश यह अवलोकन करने में पूरी तरह सही थे कि कंपनी द्वारा कोई शपथ पत्र दाखिल नहीं किया गया था। इसके अतिरिक्त कंपनी के विद्वान अधिवक्ता न्यायालय में उपस्थित हुए और यह कथन किया कि सामान्य आदेश पारित कर दिया जाए। इसी के अनुसार आदेश पारित किया गया था और उसके बाद कंपनी के लिए ऐसे आदेश के विरूद्ध आपत्ति उठाना खुला नहीं था। कंपनी की ओर से उपस्थित हो रहे अधिवक्ता के कथन के प्रकाश में न्यायालय के क्षेत्रीय अधिकारिता के बारे मंे आपत्ति अपना महत्व खो देती है। जवाब शपथ पत्र में रिट याचिकाकर्ता द्वारा वर्णन किया गया था कि समान परिस्थितियों वाले कई व्यक्तियों को लाभ स्वीकार किया गया तथा कोयले की अतिरिक्त मात्रा उन्हें दी गई। प्रति शपथ पत्र में उन सभी व्यक्तियों के पक्ष में हुए आदेशों की प्रतियां अभिलेख पर रखी गई थी। आगे यह भी वर्णन किया गया कि नीति, 1996 में संशोधन हुई थी तथा भूमि गवाने वाले व्यक्तियों को कोयले की अतिरिक्त मात्रा दी गई थी। ऐसा लाभ अन्य व्यक्तियों को भी स्वीकार किया गया था। रिट याचिकाकर्ता को समान लाभ स्वीकार करने से इंकार संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। अधिवक्ता ने निवेदन किया कि कि इन परिस्थितियों में, खण्ड़पीठ का अंतर न्यायालय अपील पर इस आधार पर विचार नहीं करना सही था कि यदि कंपनी द्वारा प्रति शपथ पत्र दायर नहीं किया गया तो

इसके लिए खुद को धन्यवाद कंपनी दे। (अर्थात् कंपनी इसके लिए स्वयं उत्तरदायी है) दोबारा, यह कहना सही नहीं है कि इस न्यायालय द्वारा पुर्नविलोकन याचिका पेश करने के लिए स्वतंत्रता दी गई थी। विशेष अनुमति याचिका वापस ले लिये जाने के कारण खारिज की गई, किंतु इस न्यायालय ने पुर्नविलोकन याचिका दायर करने की स्वतंत्रता नहीं दी थी। इसलिए पुर्नविलोकन याचिका स्वयं में ही पोषणीय नहीं थी। अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि यहां तक कि वर्तमान कार्यवाहियों में भी दिनांक 28 जनवरी, 2002 को पुर्नविलोकन में पारित आदेश को अपास्त करने की प्रार्थना ही है। अंतर न्यायालय अपील में पारित मुख्य आदेश (अपील को खारिज करना) को चुनौती नहीं दी गई है। इसलिए निवेदन किया गया कि इन सभी आधारों पर, कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाए तथा अपील खारिज किए जाने योग्य है।

13. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुनने के बाद, हमारी राय में अपील आंशिक रूप से स्वीकार किये जाने योग्य है। जहां तक कंपनी द्वारा उच्च न्यायालय, कलकत्ता की क्षेत्रीय अधिकारिता के संबंध में उठाई गई तकनीकी आपत्ति का संबंध है, हमारे मत में उस आधार पर रिट याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित आदेश को अपास्त करना उचित नहीं होगा। अभिलेख से यह स्पष्ट है कि रिट याचिका प्रवेश सुनवाई हेतु दिनांक 6 सितम्बर, 1999 को आई थी तथा अपीलार्थी कंपनी के अधिवक्ता उपस्थित

थे। न सिर्फ उन्होंने न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता पर कोई आपत्ति नहीं उठाई, वरन् न्यायालय के समक्ष सामान्य आदेश पारित करने के लिए अभिव्यक्त रूप से कथन किया। तदनुसार कंपनी को 1008 मिट्रिक टन की शेष मात्रा आवंटित करने का निर्देश देते हुए आदेश पारित हुआ। इसलिए हम अपीलार्थी कंपनी के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय को रिट याचिका पर विचार करने की क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी।

14. लेकिन हम रिट याचिकाकर्ता के इस तर्क को स्वीकार करने में भी असमर्थ है कि चूंकि कंपनी ने पुर्नविलोकन याचिका में पारित आदेश दिनांक 28 जनवरी, 2002 को चुनौती दी है, न कि अंतर न्यायालय अपील को खारिज करने वाले मुख्य आदेश दिनांक 17 फरवरी, 2000 को, अतः अपील पोषणीय नहीं है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया था कि जब पुर्नविलोकन याचिका खारिज हुई तो खण्ड़पीठ द्वारा अंतर न्यायालय अपील में पारित आदेश पुर्नविलोकन याचिका के आदेश में सम्मिलित हो गया। लेकिन इसके अतिरिक्त भी, जब आदेश पुर्नविलोकन याचिका में पारित आदेश को चुनौती दी गई तब इस अपील को खारिज करना उचित नहीं होगा, विशेष रूप से जब विशेष अनुमति याचिका में पक्षकारों को सुनने के पश्चात् अनुमति स्वीकार की गई है।

15. रिट याचिकाकर्ता की ओर से देरी और असावधानी के बारे में,

अपीलार्थी कंपनी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क में सार है। यह सुस्थापित है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय द्वारा समुचित रिट, आदेश या निर्देश जारी करने की शक्ति स्वैच्छिक है। रिट न्यायालय द्वारा अनुतोष देने से मना करने का एक आधार यह है कि याचिकाकर्ता विलम्ब और असावधानी का दोषी है। जहां याचिकाकर्ता संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत असाधारण उपचार का आव्हान करता है वहां उसकी बाध्यता है कि वह न्यायालय के समक्ष जल्द से जल्द उचित संभव अवसर पर आना चाहिए। रिट के लिए प्रस्ताव देने में अत्यधिक विलम्ब वास्तव में आवेदक के पक्ष में विवेक का प्रयोग करने से इंकार करने का पर्याप्त आधार है।

16. अंग्रेजी विधि के अंतर्गत न्यायिक पुर्नविलोकन की अनुमति के लिए आवेदन तुरंत किया जाना चाहिए। यदि यह विलम्बपूर्वक किया जाता है तो अस्वीकार किया जा सकता है। यह तथ्य कि लोक विधि कर्तव्य का भंग हुआ है, आवेदक के हिस्से के विलम्ब और असावधानी पर विचार करने को आवश्यक रूप से अप्रासंगिक नहीं बनाता है। यदि अनुमति भी दे दी जाए तो भी अंतिम सुनवाई के अवसर पर इस प्रश्न पर विचार किया जा सकता है कि क्या ऐसे आवेदक के पक्ष में अनुतोष स्वीकार किया जाए अथवा नहीं। (आर बनाम एसेक्स कंट्री काउंसिल, 1993 सीओडी 344 के अनुसार)

17. आर.बनाम डेयरी प्रोडयूस कोटा टिब्यूनल, (1990) 2 एसी 738, 749 : (1990) 2 आॅल ईआर 434 : (1990) 2 डब्ल्यू.एल.आर. 1302, में हाउस आॅफ लाॅर्डस ने कहा,

> '' अच्छे प्रशासन में लोकहित के लिए आवश्यक है कि लोक प्राधिकरण एवं तृतीय पक्षकारों को किसी ऐसे निर्णय, जिसपर प्राधिकारी निर्णय लेने की शक्तियों का लंबे समय, जो कि निर्णय से प्रभावित होने वाले व्यक्तियों के प्रति निष्पक्षता हेतु पूरी तरह से आवश्यक है, से उपयोग करते हुए पहुंचा हो, की विधिक वैधता के संबंध में दुविधा में नहीं रखा जाना चाहि''

18. लिण्डसे पेट्रोलियम कंपनी बनाम प्रोस्पर आर्मस्ट्रांग, (1874) 5 पीसी 221 : 22 डब्ल्यू.आर.492 में सर बान्र्स पीकाॅक द्वारा रिट जारी करने से इंकार करने में अंर्तनिहित उद्देश्य स्पष्टतयाः एवं संक्षेप में समझाया गया है।

> ''अब साम्यता के न्यायालयों में लैचेस का सिद्धांत कोई मनमाना या तकनीकी सिद्धांत नहीं है। जहां कोई उपचार देना व्यावहारिक रूप से अनुचित होगा, या तो पक्षकार ने अपने आचरण से कुछ ऐसा किया है जिसे अभित्याग के समान माना जा सकता है या जहां अपने आचरण और

उपेक्षा से, हालांकि उपचार का शायद त्याग नहीं किया हो, किंतु अन्य पक्षकार को ऐसी परिस्थिति में डाल दिया है, जिसमें बाद में उपचार की मांग करना उसके लिए न्यायपूर्ण नहीं होगा। इन दोनों मामलों में समय की चूक और देरी सबसे महत्वपूर्ण है। लेकिन हर एक मामले में यदि अनुतोष, जो अन्यथा उचित हो, के विरूद्ध तर्क मात्र देरी पर आधारित है, जो देरी, इसी विधि या मियाद के अंतर्गत बाधा की श्रेणी में नहीं आती है, बचाव की वैधता का विचारण न्यायसंगत सिद्धांतों पर किया जाना चाहिए। ऐसे मामलों में हमेशा दो परिस्थितियां महत्वपूर्ण होती है जो देरी की अवधि एवं उक्त अवधि के दौरान किये गये कार्यो की प्रकृति जो दोनों में से किसी भी पक्षकार को प्रभावित कर सकती है और एक रास्ता या दूसरा रास्ता अपनाने में न्याय अथवा अन्याय का संतुलन कारित कर सकती है जहांतक यह अनुतोष से संबंधित है''

(जोर दिया गया)

19. इस न्यायालय ने आंग्ल विधि के उपरोक्त सिद्धांतों को स्वीकार किया है। तिलोकचंद मोतीचंद बनाम एच.बी.मुंशी (1969) 2 एस.सी.आर. 824 एवं रबीन्द्रनाथ बोस बनाम भारत संघ, (1970) 1 एस.सी.आर.697 में

इस न्यायालय ने फैसला सुनाया कि मौलिक अधिकारों के उल्लंघन या अतिक्रमण के मामलों में भी, एक रिट न्यायालय याचिकाकर्ता के न्यायालय की शरण लेने में हुई देरी और असावधानी पर ध्यान दे सकता है और यदि गंभीर या अस्पष्टीकृत देरी है, तो न्यायालय ऐसे याचिकाकर्ता के पक्ष में अनुतोष देने से इंकार कर सकता है।

20. हमारे लिए इस बिन्दु पर ऐसे विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है, जहां इस न्यायालय द्वारा समान दृष्टिकोण लिया गया है। इतना कहना ही पर्याप्त है कि एक्सप्रेस पब्लिकेशन बनाम भारत संघ, (2004) 11 एस.सी.सी.526 में इस न्यायालय ने तिलोकचंद, मोतीचंद, रबिन्द्रनाथ बोस एवं रामचन्द्र देवधर बनाम महाराष्ट्र राज्य (1974) 1 एस.सी.सी. 317 को संदर्भित करते हुए सिद्धांत को इस प्रकार समझाया है।

> ''ऐसा अपरिवर्तनीय सिद्धांत प्रतिपादित नहीं किया जा सकता कि किसी भी परिस्थिति में किसी प्रावधान की संवैधानिक वैधता निर्धारित करने में देरी एक प्रासंगिक विचार होगी। यह याद रखना चाहिए कि अनुच्छेद 32 के अंतर्गत संवैधानिक उपचार विवेकाधीन है। एक मामले में यह न्यायालय विवेकाधीन उपचार से इंकार कर सकता है, यदि पीड़ित व्यक्ति बहुत सालों तक सोता रहा है। दूसरे मामले में

उल्लघंन की प्रकृति को देखते हुए न्यायालय देरी को अनदेखा कर सकता है और प्रावधान की अवैधता पर कथन कर सकता है। यह हर एक मामले पर निर्भर करता है।"

(जोर दिया गया)

21. प्रथमदृष्टया, हम संतुष्ट है कि विद्वान एकल न्यायाधीश को 1999 में रिट पिटीशन पर विचार नहीं करना चाहिए था तथा कंपनी को 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा रिट याचिकाकर्ता को देने के निर्देश नहीं देने चाहिए थे। लेकिन जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है, वह आदेश कंपनी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता के इन कथनों को कि न्यायालय सामान्य आदेश पारित कर सकती है, के आधार पर पारित किया गया। रिट याचिकाकर्ता द्वारा प्रतिशपथ पत्र में यह भी कहा गया कि विभिन्न मामलों में इसी प्रकृति के आदेश पारित किये गये। अतः यह उचित होगा कि हम रिट याचिकाकर्ता को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का लाभ 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा की सीमा तक दे जो कंपनी के अधिवक्ता द्वारा किये गये कथन पर आधारित है।

22. हमारे मत में, हालांकि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता सही है कि जब रिट याचिका 6 सितंबर 1999 को निस्तारित हो गई जहां 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा रिट याचिकाकर्ता को आवंटित करने के निर्देश दिये गये, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 13 सितंबर, 1999 को

आदेश दिनांक 6 सितम्बर, 1999 में संशोधन/स्पष्टीकरण बाबत् किसी आवेदन के बिना मामले का उल्लेख मात्र करने पर एक आदेश पारित करना उचित नहीं था।

23. 13 सितम्बर, 1999 को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया-

> ''श्री डी.पी. मजूमदार, अधिवक्ता ने उल्लेखित और प्रस्तुत किया।
>
> श्री ए.के.मित्रा, अधिवक्ता उपस्थित और प्रस्तुत करते है।
>
> न्यायालय द्वाराः आदेश दिनांक 06.09.1999 के अंतिम से तीसरे परिच्छेद को निम्नप्रकार से सही किया जाता हैः-
>
> प्रत्यर्थीगण को निर्देशित किया जाता है कि नयनडांगा कोलियरी, मुग्मा क्षेत्र से 6800 मिट्रिक टन ग्रेड डी की गुणवत्ता का स्टीम कोयला 25.05.1989 के मुक्ति आदेश की शर्तो के अनुसार याचिकाकर्ता को अनुलग्नक सी की शर्तो के अनुसार आवंटित करें।
>
> इस आदेश की संसूचना की दिनांक से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर यह आपूर्ति अमल में लायी जायेगी।

पूर्ववर्ती आदेश दिनांक 06.09.1999 में यह आदेश सम्मिलित होगा।

सभी पक्षकारों को इस आदेश के कार्यवृत्त की हस्ताक्षरित प्रति पर कार्य करना हैं। ''

24. हमारा उपरोक्त आदेश के प्रकाश में यह मत भी है कि खण्ड़पीठ को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 13 सितम्बर, 1999 के आदेश में दिये गये निर्देशों में हस्तक्षेप करना चाहिए था और अंतर न्यायालय अपील स्वीकार करनी चाहिए थी। जब अंतर न्यायालय अपील खारिज हो गई तो अपीलार्थी ने विशेष अनुमति याचिका दायर करते हुए इस न्यायालय की शरण ली। यह वापस लिए जाने से खारिज हो गयी क्योंकि कंपनी खण्ड़पीठ के समक्ष पुर्नविलोकन याचिका प्रस्तुत करना चाहती थी। प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए खण्डपीठ को उपरोक्त पहलू पर भी ध्यान देना चाहिए था और विधि के अनुसार उचित आदेश पारित करना चाहिए था।

25. परिस्थितियों की समग्रता से, हम इस सुविचारित दृष्टिकोण के है कि प्रत्यर्थी रिट याचिकाकर्ता उसके द्वारा कंपनी को पंजीकृत विक्रय विलेख से बेची गई भूमि की कीमत (प्रतिफल) का हकदार था, जो उसे अदा की जा चुकी है। वह 1008 मिट्रिक टन कोयले का भी हकदार था, जो उसे नीति के अनुसार दिया जा चुका है। वह इसके अतिरिक्त 1008 मिट्रिक टन का

भी, जिसका शेष मात्रा के रूप में उसे देने का आदेश कंपनी के अधिवक्ता के कथन के आधार पर तथा 6 सितम्बर, 1999 के विद्वान एकल न्यायाधीश के सामान्य आदेश की शर्तो के अनुसार हकदार था। हम, लेकिन सहमत है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 13 सितम्बर, 1999 को पूर्व आदेश में बिना किसी संशोधन के आवेदन पत्र के मामले का उल्लेख करने पर प्रार्थना स्वीकार करना एवं कंपनी को ग्रेड डी गुणवत्ता का 6800 मिट्रिक टन स्टीक कोयले की शेष मात्रा आवंटित करने का निर्देश देना उचित नहीं था। अतः इस सीमा तक कंपनी द्वारा की गई अपील स्वीकार करने योग्य है।

26. उपरोक्त कारणों से अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है और रिट याचिकाकर्ता को 1008 मिट्रिक टन जो कि प्रारंभ में उसे दिया गया था, एवं उसके अतिरिक्त 6 सितम्बर, 1999 के आदेश के अनुसार 1008 मिट्रिक टन कोयले की शेष मात्रा का हकदार घोषित किया जाता है। रिट याचिकाकर्ता इससे अधिक का हकदार नहीं होगा। यदि उपरोक्त मात्रा का कोयला उसे आवंटित कर दिया गया है तो कंपनी ने अपने दायित्व का निर्वहन कर दिया है और इससे अधिक कुछ करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन यदि उपरोक्त मात्रा अभीतक नहीं दी गई है तो रिट याचिकाकर्ता उपरोक्त सीमा तक कोयले का हकदार होगा। प्रकरण के तथ्यों एवं परिस्थितियों के मद्देनजर खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

अपील आंशिक रूप से स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मधुसूदन शर्मा (आर.एच.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

धन्यवाद।